Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 SHISRRJ | Volume 3 | Issue 6 | ISSN : 2581- 6306

21वीं सदी के हिंदी उपन्यासों में अभिव्यक्त किसान जीवन की त्रासदी

सुभ्रांसिस बारिक
प्रवक्ता, हिन्दी विभाग
खैरियर (स्वायत्त) कालेज, नौपाड़ा, ओडिसा,
भारतम्।

Article Info
Volume 3, Issue 6
Page Number: 97-102

Publication Issue :
November-December-2020

Article History
Accepted : 10 Nov 2020
Published : 24 Nov 2020

सारांश – भारत जिस तेजी से विश्व पटल में अपने विकास का चित्र बना रहा है उसी तेजी से भारत में किसान का चित्र मिटता जा रहा है। इस संकट को उपन्यासकार पंकज सुबीर 'अकाल में उत्सव'उपन्यास में बताते हैं कि "जिस तेजी से किसान खेती छोड़ रहा है, जमीन बेच रहा है, कुछ दिनो बाद सभी मल्टीनेशनल कंपनियाँ ही खेती करेंगी। तब कोई न्यूनतम समर्थन मूल्य नहीं होगा। कंपनियाँ जो चाहेगी वहीँ समर्थन मूल्य रहेगा।"[i] यह देश के लिए एक भयावह स्थिति होगी। समय रहते इस पर विचार विमर्श करना बहुत जरुरी है। आज कोई भी युवा किसान बनना नहीं चाहता है। खेती के सिवा बह कोई भी काम करने के लिए तैयार है। क्यूंकि दुसरे काम में आत्महत्या या मृत्यु का भय तो नहीं रहेगा। आज भी देश की बहुसंख्यक आवादी किसानों की है। अगर इनका विकास नहीं हुआ तो देश कभी भी विकास नहीं कर सकता। विश्व में लगभग 200 देश है। किसी भी देश में किसान इतने परिमाण में आत्महत्या नहीं करते हैं। अगर ऐसे हीं चलता रहा तो भारत का विश्व गुरु बनने का सपना बस सपना बनकर हीं रह जाएगा।

मुख्य शब्द – भारत, उपन्यास, किसान, अभिव्यक्त, हिन्दी, खेती।

'भारत एक कृषि प्रधान देश है' और 'जय जवान जय किसान' का नारा सुनते-सुनते दशकों बीत गए पर यह केवल नारेबाजी में सिमित हो कर रह गया है। न जवान का जय हो रहा है और न हीं किसान का। इसका प्रमाण पिछले दस सालों में 1.5 लाख किसानों द्वारा की गई आत्महत्या है।भारत सरकार की हीं रिपोर्ट के अनुसार पिछले साल 12,000 किसानों ने आत्महत्या की है।अर्थात प्रतिदिन भारत में 32 किसान आत्महत्या कर रहे हैं। पुरे विश्व में भारतको किसान आत्महत्या का केंद्र के रूप में देखा जाने लगा है। यह निश्चय ही भारत के लिए राष्ट्रिय शोक की बात है।

मनुष्य को जिंदगी गुजारने के लिए तीन मौलिक चीजों की आवश्यकता है- रोटी, कपड़ा और मकान। इनमें से कपड़ा और मकान न हो तो भी जिया जा सकता है परंतु रोटी जरुरी है क्यूंकि अन्न के बिना जीवन असंभव है।आज भी देश के 60 प्रतिशत जनता खेती-बाड़ी को जीवन का आधार बनाए हुए हैं।किसान इस दुनिया का सबसे बड़ा वैज्ञानिक है, जिसने अन्न की खोज की, खेती-बाडी का आविष्कार किया। उसी अन्नदाता किसान की अस्मिता आज मिटने की कगार पर है। भारत में अन्नदाता की यह हाल निश्चित हीं देश को पीछे ले जाएगा।किसानों का अस्तित्व साहित्य, सिनेमा, मीडिया एवं कला के क्षेत्र

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

में दिन व दिन मिटता जा रहा है। सरकार भी उनके तरफ ध्यान नहीं दे रही है। इससे ज्यादा दुख की बात यह है कि हमारा सभ्य समाज केवल एक मूक दर्शक बन कर रह गया है।

किसान का विकास देश का सच्चा विकास होगा। किसानों की स्थिति में सुधार लाने केलिए स्वामिनाथन आयोग की रिपोर्ट को लागु करना बहुत जरुरी है। सरकारें बदलती रही परंतु 2006 से अबतक इस रिपोर्ट के ऊपर किसी ने ध्यान नहीं दिया। किसानो की मुलभुत आवश्यकता खाद, बिजली, पानी की भी सरकार व्यवस्था नहीं कर पा रही है।ऐसी स्थिति में एक 'किसान विमर्श' खड़ा करना बहुत जरुरी है।किसानों की इन तमाम मुद्दों को हिंदी उपन्यासों में बहुत गंभीर रूप से प्रस्तुत किया गया है।

कृषि और मेहनतकश वर्ग की चर्चा करते हुए प्रेमचंद 'कर्मभूमि' उपन्यास में लिखते हैं"कृषि प्रधान देश में खेती केवल जीविका का साधन नहीं है, सम्मान की वस्तु भी है।"[ii] यहबात प्रेमचंद 1920-22 के आस पास लिख रहे थे जब खेती करना, घर में दो-चार गाय-बैल का होना सम्मान की बात थी। लेकिन जमींदारों, महाजनों एवं अंग्रेजों की लूट व्यवस्था ने उन्हे तबाह कर दिया। किसानों ने इस व्यवस्था का बहुत विरोध किया, संघर्ष किया, आंदोलन किया लेकिन इसका ज्यादा लाभ नहीं मिला। आजाद भारत में किसानों को उम्मीद थी कि स्थिति सुधरेगी लेकिन ऐसा कुछ भी नहीं हुआ और उनकी स्थिति बदतर होती गई। किसान हाशिये की श्रेणी में आ गए। पहले जो कृषि किसान के सम्मान की बात थी आज उसके विनाश का कारण बन गया है। वह कृषि से पलायन कर रहा है, खेत बेच दे रहा है। फसल की पैदाइश न हो, तो भुखमरी से जूझ रहा है। फसल ज्यादा हो जाए तो उसके मूल्य बाजार में कम हो जा रहे हैं। सरकार के पास मंडी नहीं है अनाज रखने के लिए। फसल बाहर पड़ा हुआ सड़ जाता है। पानी, बिजली जैसी बुनियादी चीजें सरकार उन्हें मुहैया नहीं करा पा रही है।

वैज्ञानिक प्रगति, औद्योगिक क्रांति,इंटरनेट का प्रसार, आधुनिक उपकरण आदि चीजों के आने के बाद भी किसान जीवन में बदलाव नहीं आ रहा है उसके पास आधुनिक उपकरणों को खरीदने के पैसे ही नहीं है। अभी भी वह पारंपरिक तरीके से बंधा हुआ है। ज्ञान-विज्ञान और आधुनिक उपकरण के प्रयोग के ऊपर ध्यान नहीं दे पा रहा है। भारत की आने वाली पीढ़ी खेती छोड़ने की राह पर है। उसको खेती में अपना भविष्य नहीं दिख रहा है बल्कि विनाश दिख रहा है।

राजू शर्मा का उपन्यास 'हलफनामे' किसानों की आत्महत्याओं को लेकर लिखा गया पहला उपन्यास है।यह उपन्यास हमारे समाज में किसानों की वास्तविक रूप को प्रकट करता है। उपन्यास के मुख्य पात्र मकईराम के पिता राम प्रसाद जिंदगी से हार मानकर आत्महत्या कर लेते हैं।पिता के आत्महत्या के एवज में कुछ आर्थिक सहायता पाने के लिए मकईराम हलफनामे दायर करता है और यही से मकईराम के जीवन में समस्याओं का अंतहीन सिलसिला शुरू हो जाता है। सरकारी अव्यवस्था, सत्ता की असंवेदनशील नीतियाँ एवं सरकारी तंत्र में छोटे से लेकर बड़े अफसर तक व्याप्त भ्रष्टाचार का उजागर इसमें किया गया है। मुख्यमंत्री चुनाव को मद्दे नजर रखते हुए एक असंवेदनशील योजना की घोषणा कर देते हैं,'किसान आत्महत्या योजना'। मंत्री घोषणा करते हैं कि "प्रदेश के किसानों को हर संभावित दुर्दशा से बचाना, उसकी रक्षा करना हमारा अनिवार्य लक्ष है। इस लक्ष पूर्ति के लिए मुख्यमंत्री ने किसान विपदा निवारण योजना का शुभारंभ किया है।यदि इस प्रदेश का कोई लक्षित किसान विपरीत परिस्थितियों में आत्महत्या करने को मजबूर होता है तो प्रशासन उसके परिवार को दो लाख की राशि मुआवजे के रूप में प्रदान करेगा।"[iii]जो किसान जीते जी इतना पैसा कभी देख भी नहीं सका कुछ हजार रूपए के लिए आत्महत्या कर लिया उसको मरने के बाद दो लाख मिलेगा। मतलब यह है कि जिंदा इनसान की कोई कद्र नहीं। दो लाख के लिए उसे मरना पड़ेगा। किसान को मरने के लिए सरकार एक तरह से प्रोत्साहित ही कर रही हैं। मकईराम इस मुआवजे को पाने क लिए 19 बार हलफनामा दायर कर चूका है।सरकारी दफ्तर और कोर्ट कचहरी का चक्कर लगाते-लगाते पूरा परिवार पिस जाता है। मानसिक तनाव झेलता है और पूंजी की बर्बादी भी करता है साल बीत जाता है मगर अंत तक मुआवजे की

रकम नहीं मिल पाता है।सरकार की इस भ्रष्ट नीति को हिंदी सिनेमा 'पीपली लाइव' में बहुत बेहतरीन ढंग से प्रस्तुत किया गया है।नत्था नामक किसान सरकारी मुआवजा पाने की आशा में आत्महत्या करना चाहता है परंतु सरकारीतंत्र नत्था को बचाने के वजह जीते जी मर जाने के लिए विभिन्न तरीके से दबाव डालती है। इस परिस्थिति से नत्था इतना परेशान हो जाता है कि वह गाँव छोड़ कर शहर भाग जाता है और मजदुर बनकर एक गुमशुदा जिंदगी जीने लगता है।राजू शर्मा हलफनामे उपन्यास के माध्यम से समाज का ध्यान आकर्षित करने की कोशिश करते हुए लिखते हैं “अगली बार जब आप रोटी का टुकड़ा तोड़े, पके अन्न की खुशबु से आपका तन मन खिल रहा हो तो याद रखना कि आपके आसन तक रोटी पहुँचाने के पीछे सच्चे, मेहनती किसानों के पीठ से बहता नायाब पसीना है जो हमारे किसान प्रधान समाज में रत्न बन कर शामिल है। और जब भी किसान आत्महत्या करेगा उस रोटी से स्वाद और सुगंध नहीं रक्त की बूंदे टपकेंगी”।[iv]

लेखक बेचैन और परेशान हैं कि किसान के आत्महत्या पर लोग इतना चुप कैसे हैं? कोई हमदर्दी नहीं, कोई संवेदनशीलता दिखाई नहीं दे रही है। प्रत्येक वर्ष विभिन्न प्रकार की आपदाओं, दुर्घटनाओं, लड़ाई आदि में मरने वालों की संख्या जितनी है उससे ज्यादा किसान तो प्रतिवर्ष आत्महत्या कर रहे हैं। यह एक बहुत बड़ी गंभीर समस्या है। जिसके ऊपर जनता या सत्ता–तंत्र का ध्यान न जाना बहुत ही दुखद और विचारणीय है।

कथाकार संजीव जी का उपन्यास 'फाँस' वर्तमान बहुत चर्चा में रहा है। जिसका सम्पूर्ण कथावस्तु किसान जीवन के ऊपर केन्द्रित है।इस उपन्यास में महाराष्ट्र के विदर्भ क्षेत्र में हो रहे किसान आत्महत्याओं को केन्द्रीय विषयवस्तु बनाया गया है। भारत में सबसे ज्यादा किसान आत्महत्या विदर्भ में ही होता है।उपन्यास का मुख्यपात्र शिबू है। भूमंडलीकरण और उदारीकरण के आने के बाद किसान जीवन में बहुत तेजी से परिवर्तन आता गया।वह किसान से मजदुर बन गया। खेती बाड़ी छोड़कर जमीनबेचकर शहर के तरफ पलायन करने लगा। व्यवस्था की चक्रव्यूह में इस तरह फंसा कि जीवन से ज्यादा सहज उसे मृत्यु लगने लगा और वह आत्महत्या जैसे कदम उठाने के लिए विवश हो गया। उसके जीवन में रोज नई–नई समस्याएं आने लगी।दो वक्त की रोटी का इंतजाम भी कर पाना उसके लिए मुशकिल हो गया। जो किसान पुरे देश का पेट भरता आ रहा है आज वह खुद भूखे प्यासे अपनी जान गवां रहा है।

कर्ज किसान के जीवन में सबसे बड़ी समस्या है। उसे किसी भी हालत में कर्ज लेना हीं है। प्रेमचंद कहते हैं “कर्ज एक ऐसा मेहमान है जो एकबार आकर फिर कभी नहीं जाता।”[v] फ़ांस उपन्यास का महिला पात्र शकुन इस बारे में कहती है “इस देश का किसान कर्ज में हीं जन्म लेता है, कर्ज में जीता है और कर्ज में हीं मर जाता है।”[vi] किसीको विरासत में शोहरत मिलता है, किसीको दौलत मिलता है,तो किसीको रूप–रंग मिलता है पर किसान को विरासत में कर्ज हीं मिलता है। किसान आर्थिक रूप से इतना कमजोर हो चूका है कि खेत जोतने के लिए उसके पास बैल खरीदने के पैसे भी नहीं है।कथाकार संजीव 'फाँस' उपन्यास में बनगांव का वर्णन करते हुए लिखते हैं “किसी–किसी के जुए में एक बैल, एक भैंसा होता। एक आध के जुए में इनसान भी। शकुन अपनी दशा बताते हुए कहती है “शेती के लिए कभी बैल मिलता कभी नहीं। न मिलता तो जुए में एक तरफ भाई होता तो दूसरी तरफ ये। हल को मैं संभालती... बस एक ही डर है कि वह आत्महत्या न करले।”[vii]भारत में अन्नदाता का यही वास्तविक स्थिति है। व्यवस्था के जुए में वह पिसने के लिए मजबूर है।मौत का साया हमेशा उसके सर पर मंडरा रहा है। सरकार, नेता, मंत्री, पूंजीपति, बिचोलिए, बैंक और प्राकृतिक आपदाएं सबने मिलकर

उसका शोषण ही किया है। वह साल भर दिन-रात कड़ी मेहनत करता है फिर भी उसका विकास नहीं हो पाता परंतु उसी के परिश्रम और उपज का इस्तमाल करके दुसरे लोग अमीर बनते जा रहे हैं।

किसान के इस शोषण के पीछे धर्म, जाति, राजनीति, अर्थ, अशिक्षा, सामाजिक रीति- नीति आदि अनेक कारण हैं, जिसको समझना किसान के लिए जरुरी है। धर्म एक ऐसा चीज है जिसको लगभग सब लोग मानकर चलते हैं।यही धर्म किसान मजदुर वर्ग का सबसे बड़ा शत्रु है।कालमार्क्स 'धर्म को समाज के लिए अफीम मानते हैं'। महान दार्शनिक शुकरात ने कहा था कि 'ईश्वर केवल शोषण का नाम है'।स्वर्ग-नर्क पाप-पुन्य के चक्कर में वो जीवन भर खुदका शोषण करवाता है और उससे भी ज्यादा दुख की बात यह है कि किसान इसे अपना किस्मत मानकर सबकुछ चुपचाप सह जाता है। प्रेमचंद के सभी कहानी और उपन्यास में यह दिख जाएगा कि धर्म और जाति किसान-मजदुर वर्ग के शोषण का सबसे बड़ा हथिआर है। संजीव 'फाँस' उपन्यास में इसका जिक्र करते हैं।उपन्यास का एक पात्र मोहन दादा समस्याओं से उबरने के लिए अपना बैल बेच देता है जिसको कसाई काटकर मांस बेचता है। इसी वजह से गाँव वाले मोहन दादा को ही गो हत्यारा कहने लगते हैं। इसका प्रायश्चित करने के लिए मोहन दादापंडित के पास जाते हैं। 100 रूपए पंडित लेता है और प्रायश्चित केलिए एक अजीब तरीका बताता है "बैल के गले का फंदा डालकर भीख मांगनी पड़ेगी और शुद्धि तक इनसान की बोली बोल नहीं सकते। केवल बैल की बोली...बां...या फिर संकेत! समझे? इस पोला से अगले पोला तक। फिर मैं आकर प्रायश्चित और शुद्धि के लिए विधान करूंगा।"[viii] मोहन दादा उस दिन के बाद फिर कभी नहीं बोले और कहाँ गायब हो गए किसीको नहीं पता चला। धार्मिक अन्धविश्वास और पाखण्डवाद ने एक जीवित व्यक्ति को मुर्दा एवं अपाहिज बना दिया। यही हाल 'गोदान' में होरी के साथ भी होता है। जीते जी जिस गाय को होरी नहीं पा सका मरते समय उसी गाय के नाम पर 20 आना देकर गोदान करवाया जाता है।ब्राह्मण की इसी अमानवीयता एवं असंवेदनशीलता के ऊपर रामविलास शर्मा लिखते हैं "किसान मुर्दा है और उसकी स्त्री मूर्छित, सूदखोर दातादीन पुरोहित के रूप में अब भी हाथ पसारे खड़े हैं।"[ix] ब्राह्मण को धर्म या ईश्वर का भय नहीं है। वह केवल अपने को ऊपर उठाने के लिए धर्म को सीड़ी बनाता रहा है। इन्ही शोषणवादी नीतियों को देखते हुए शिबू की पत्नी शकुन धर्म परिवर्तन कर लेती है और बौध धर्म अपनाती है। महाराष्ट्र में निरंतर चल रहे धार्मिक परिवर्तन का असर इस उपन्यास में दिखाया गया है।

सरकार किसानों की उन्नति के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठा रही है। जो जनता सरकार बना सकती है वह सरकार गिरा भी सकती है और जिस दिन किसान को यह एहसास हो गया उस दिन सत्ता परिवर्तन हो कर रहेगा। जिसको जनता के साथ खड़ी रहनी चाहिए वही सरकार पूंजीपतियों के साथ खड़ीदिखाई दे रही है। दशकों से किसानों के साथ केवल छलावा हुआ है। विकास के नाम पर उनका विनाश ही किया जा रहा है। पारंपरिक खेती को छोड़कर किसान पूंजीपतियों के लिए फसल उगाने लगा है। इस विषय पर 'फाँस' उपन्यास में एक किसान नेता लोगों को समझाते हुए कहता है "नकदी फसल पूंजीवाद का फैलाया हुआ जहर है। कपास सबसे बड़ी नकदी फसल है। देश में सुनामी, दंगे, उत्तराखंड का तांडव सबको जोड़ दिया जाए तो जितना मरे उससे भी ज्यादा 2012 तक दो लाख चौरासी हजार किसान मारे गए। जिसमे 68 प्रतिशत कपास की खेती में। किसानी एक जुआ खेल है।"[x]किसान का सम्पूर्ण भविष्य उसके फसल पर निर्भर करता है। फसल बनकर तैयार होने में महीनों लग जाते हैं और इसी बिच किसान का जीवन तलवार की धार पर चलने जैसा है। सुखा, असमय बारिश,

बाढ़, पशु पंछियों का फसल चर जाना, ओला गिरना आदि चीजों से बच जाए तो बाजार में उसका उचित मूल्य मिल पाना भी एक समस्या है। कब कौनसी आपदा आ जाए और किसान का पूरा भविष्य अंधकारमय हो जाता है। फिर से कर्ज के जाल में जाकर फसना है। किसान के लिए सबसे ज्यादा जरुरी है पानी। फाँस उपन्यास का किसान नेता सरकार से कहता है "हमें दान की जरुरत नहीं हमें सिर्फ सिंचाई के लिए थोडा खाद पानी दे दो।"[xi]खेती किसानी के लिए पानी मुलभुत आवश्यकता है। परंतु आजादी के इतने साल बित जाने के बाद भी सरकार किसानों के लिए पानी की व्यवस्था नहीं कर पाई। आज भी किसान बारिश के ऊपर निर्भर होकर खेतीबाड़ी कर रहा है।

जो खेत किसान के जीवन का आधार है वही खेत आज किसान के गले का फंदा बन चूका है। किसानी एक जुआ खेल बन गया है जहाँ जितने की संभावना बहुत कम है और हारने की ज्यादा। सरकार की गलत नीतियाँ, बिचोलिए, कुदरत की मार, सूखा, बाढ़, ओलावृष्टि एवं मौसम की अनियमितता ने किस तरह किसान के जीवन को नर्क बना दिया है। उसका चित्रण हमें पंकज सुबीर का उपन्यास 'अकाल में उत्सव' में देखने को मिलता है। उपन्यास का यह शीर्षक हमारे समय की किसान त्रासदी को अभिव्यक्त करने के लिए काफी है। इसमें किसानों के दुख दर्द का वर्णन तो हुआ है उसके साथ सत्ता और प्रशासनिक तंत्र की संवेदनहीनता को भी उघाड़ कर रखा गया है। खेत में ओला गिरने के कारण रामप्रसाद नामक किसान का भविष्य अंधकार हो जाता है। कर्ज के जंजाल से मुक्त होने के लिए आत्महत्या कर लेता वहीँ दूसरी तरफ सरकारी तंत्र अपनी झूठी और कागजी उपलब्धियों के जश्न में नगर उत्सव के नाम पर करोड़ों रूपए खर्च कर लेती है।

पंकज सुबीर प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरु के एक वक्तव्य का हवाला देते हुए कहते हैं "नेहरु जी ने एक बार कहा था कि देश को विकास की तरफ बढ़ते देखना है तो गरीबों और किसानों को सेक्रीफाइज करना पड़ेगा। आजादी के 70 साल पुरे हो गए परंतु केवल किसान ही सेक्रीफाइस कर रहा है। बाकि सबका सैलेरी बढ़ा, मजदूरी बढ़ी। सप्तम वेतन लागु हो गया परंतु किसानों के फसलों का वाजीब मूल्य अब भी उसे नहीं मिल रहा है।"[xii] किसान आज भी फसल के न्यूनतम समर्थन मूल्य प्राप्त करने के लिए संघर्ष कर रहा है। सरकार जो न्यूनतम समर्थन मूल्य तै करती है वह भी कभी ढंग से नहीं मिल पाता है। देश का मात्र 10 से 12 प्रतिशत किसान हीं मंडी में अपना अनाज बेच पाता है। अन्य 90% किसान को वह न्यूनतम समर्थन मूल्य भी नहीं मिल पाता है।उसे न्यूनतम न कहकर सर्वाधिक समर्थन मूल्य कहेंगे तो बेहतर होगा।सरकार, पूंजीपति और बाजारवाद ने मिलकर किसान के जीवन को जर्जर कर दिया है। सरकार अब जो भी नीतियाँ बना रही है उसमे पूंजीपतियों के हित को ध्यान में रखा जा रहा है।बड़े-बड़े शोपिंग मौल, मैकडोनाल्ड, बर्गेर-पिज्जा सेंटर, मल्टीप्लेक्स आदि जगह किसानों की उपजाई चीजें कई गुना ज्यादा दाम पर बिकती है। भारतीय किसान के इस विडंबना कीओर संकेत करते हुए पंकज सुबीर लिखते हैं "कितना बड़ा मजाक है कि गरीब किसान की मक्का का तो न्यूनतम समर्थन मूल्य तय है मगर उस मक्का से कॉर्नफ्लेक्स बनाने वाली बहुराष्ट्रीय कंपनी के लिए कोई भी न्यूनतम समर्थन मूल्य तय नहीं है। देढ़ रूपए किलो की मक्का को बहुराष्ट्रीय कंपनी कॉर्नफ्लेक्स बनाकर तीन सौ रूपए किलो में बेचती है। पंद्रह सौ रूपए क्विंटल समर्थन मूल्य पर बिकने वाली मक्का का मुर्गी छाप कॉर्नफ्लेक्स 150 रूपए में 500 ग्राम की दर से बिकता है।"[xiii] कहने का मतलब यह है कि किसानों की उपजाई चीज का व्यापार कर विचौलिए और पूंजीपति कुछ पल में हीं भरपूर लाभ उठा लेते हैं किन्तु किसान महीनों खेत में परिश्रम करके भी अपने परिवार का गुजारा नहीं कर पाता है और चंद रुपयों के लिए आत्महत्या जैसे कदम उठाने को बाध्य होता है। किसान भारतीय अर्थ व्यवस्था की एक मजबूत कड़ी है परंतु अपनी आर्थिक स्थिति

सुधारने के लिए वह सक्षम नहीं हो पा रहा है। यही किसान जीवन की त्रासदी है। जिसके फलस्वरुप वे धीरे-धीरे खेती बाड़ी छोड़ता जा रहा है।

भारत जिस तेजी से विश्व पटल में अपने विकास का चित्र बना रहा है उसी तेजी से भारत में किसान का चित्र मिटता जा रहा है। इस संकट को उपन्यासकार पंकज सुबीर 'अकाल में उत्सव'उपन्यास में बताते हैं कि "जिस तेजी से किसान खेती छोड़ रहा है, जमीन बेच रहा है, कुछ दिनो बाद सभी मल्टीनेशनल कंपनियाँ ही खेती करेंगी। तब कोई न्यूनतम समर्थन मूल्य नहीं होगा। कंपनियाँ जो चाहेगी वहीँ समर्थन मूल्य रहेगा।"[xiv] यह देश के लिए एक भयावह स्थिति होगी। समय रहते इस पर विचार विमर्श करना बहुत जरुरी है। आज कोई भी युवा किसान बनना नहीं चाहता है। खेती के सिवा बह कोई भी काम करने के लिए तैयार है। क्यूंकि दुसरे काम में आत्महत्या या मृत्यु का भय तो नहीं रहेगा। आज भी देश की बहुसंख्यक आवादी किसानों की है। अगर इनका विकास नहीं हुआ तो देश कभी भी विकास नहीं कर सकता। विश्व में लगभग 200 देश है। किसी भी देश में किसान इतने परिमाण में आत्महत्या नहीं करते हैं। अगर ऐसे हीं चलता रहा तो भारत का विश्व गुरु बनने का सपना बस सपना बनकर हीं रह जाएगा।

सन्दर्भ सूची :

[i].वही, पृ-171

[ii].वीरेंद्र यादव, प्रगतिशीलता के पक्ष में, साहित्य भंडार प्रकाशन, 2014, पृ-6

[iii].राजु शर्मा, हलफनामें, राधाकृष्ण पेपरबैक्स, संस्करण-2007, पृ-22

[iv].वही, पृ-248

[v].सत्यप्रकाश मिश्र, प्रेमचंद के श्रेष्ठ निबंध, लोकभारती पेपरबैक्स, तीसरा संस्करण-2013, पृ-130

[vi].संजीव, फाँस, वाणी प्रकाशन, संस्करण-2015, पृ-15

[vii].वही, पृ-42

[viii].वही, पृ-56

[ix].रामविलास शर्मा, प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, संस्करण-2006, पृ-116

[x].संजीव, फाँस, वाणी प्रकाशन, संस्करण-2015, पृ-190

[xi].वही, पृ-72

[xii].पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, शिवना पेपरबैक्स, संस्करण-2017, पृ-42

[xiii].वही, पृ-43

[xiv].वही, पृ-171